International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
ISSN: 2457-0362

शिवानी के उपन्यासों में नारी जीवन का अध्ययन

CANDIDATE NAME- ANJANI SHARMA

DESIGNATION- RESEARCH SCHOLAR OPJS UNIVERSITY CHURU RAJASTHAN

GUIDE NAME - DR. DIGVIJAY SHARMA

DESIGNATION- ASSISTANT PROFESSOR & D.LITT , DEPARTMENTIN HINDI OPJS UNIVERSITY CHURU RAJASTHAN

सारांश

शिवानी जी को स्त्री जीवन की गहरी समझ है जो कुछ अधूरा छूटा रह गया उसे भी लेखिका ने अपनी वैचारिक चेतना के जरिए तलाशा और उनकी ये तलाश एक मुकम्मल सोच के रूप में उनकी रचनाओं में दर्ज होती चली गयी। और भाषा ऐसी कि बस आप मंत्रमुग्ध हो बार–बार उसकी तरफ किसी तरह खिंचते चले जाते हैं। शिवानी जी की लेखनी से हिन्दी के पाठक वर्ग सुपरिचित हैं। उनके कहानी–उपन्यासों ने समाज के जीते–जागते पात्रों को उठाकर उन्हें अमर कर दिया है। शिवानी ने कृष्णकली, सुरगंमा, और किशुनली की 'ढांढ' आदि उपन्यास में कुछ ऐसे पात्रों को उभारा है जो पाठकों की नजर में अनायास ही चढ़ जाते हैं और कथा समाप्त होने पर हमारे चित पर अमिट छाप छोड़ जाते हैं। शिवानी जी जहाँ पात्रों को कृत्रिम ढंग से भला बनाने और हृदय–परिवर्तन करने का प्रयास न करके उसे उसके अकृत्रिम और यथार्थरूप में पेश करती हैं, वही उनका चरित्र चित्रण अधिक सुन्दर बन पड़ता है। उनकी चरित्र–सृष्टि यथार्थवादी है। इनके पात्र हमारे आस–पास के जीते–जागते पहचाने जाने वाले पात्र हैं। इनके आदर्श पात्रों में भी मानवोचित दुर्बलताएँ दिखाई देती है और बुरे–से–बुरे पात्रों में भी अपनी सद्प्रवृत्तियों के आयाम अनुभव करते हैं। आन्तरिक संघर्ष एवं द्वन्द्व प्रायः सभी पात्रों में पाया जाता है। इतना ही नहीं पात्रों के चित्रण को चित्रोपम रूप प्रदान करने में शिवानी सिद्धहस्त हैं। बारीक–से–बारीक रेखाओं की मांसलता और वर्णन की सूक्षमता से प्रत्येक चरित्र प्राणवान बन उठता है और वह सहज ही नहीं भुलाया जा सकता। किशुनली, अनसूइया, हीरावती आदि ऐसे चरित्र है जो पाठक की संवेदना से जुड़कर उसकी स्मृतियों में बस जाते हैं। शिवानी ने अपने पात्रों के माध्यम से नर–नारी को भीतर से जानने की कोशिश की ळें

मुख्यशब्द : शिवानी जी, अमिट छाप, मंत्रमुग्ध, उपन्यास

प्रस्तावना

इस संसार में 'नारी' शब्द नर के समान है। इसका प्रयोग स्त्री लिंग वाची प्रतीक रूप में होता है। किन्तु मानव समाज में 'नारी' शब्द सामान्य अर्थ में गृहित नहीं है, क्योंकि उसका स्थान नर से कहीं बढ़कर है। मैथिलीशरण गुप्तजी के शब्दों में – "एक नहीं दो–दो मात्राएँ, नर से बढ़कर नारी कोमलता, दृढ़ता, स्पृहा गुण नर की अपेक्षा नारी में विशेष पाये जाते हैं। यही नहीं रूप, आकार, शरीर संगठन, कार्य व्यापार एवं जीवन स्थापन की विविध स्थितियों में नारी विविधता की उच्चतम् परिकल्पना सिद्ध हुई है।"1 मानवजाति की सभ्यता एवं सामाजिक विकास का मूल स्त्राोत नारी है। संसार में नर–नारी का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में नर के बिना नारी और नारी के बिना नर अपूर्ण है। पारिवारिक जीवन में पुरुष और नारी दोनों उतने ही उपयोगी हैं जितने रथ के दो पहिए। एक उपयोगी तथा सफल रथ के लिए दूसरी आवश्यक वस्तुओं के साथ–साथ पहिए भी अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। यदि किसी रथ का एक पहिया छोटा, कमजोर तथा जर्जर है तो दूसरा पहिया भी किसी काम का नहीं रहता और धीरे–धीरे रथ का अस्तित्व भी मिट जाता है। ठीक इसी प्रकार पारिवारिक जीवन में पुरुष तथा नारी की

International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
IJARST
ISSN: 2457-0362

समानता अति आवश्यक है। इन दोनों में एक के निर्बल तथा अशक्त हो जाने से समाज का अस्तित्व भी अनिश्चित सा हो जाता है क्योंकि दोनों के योगदान से समाज का निर्माण होता है तथा उसमें स्थिरता आती है। सृष्टि के विकास क्रम में नर के समान नारी का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा है। प्रजनन जीव का महत्त्वपूर्ण कार्य है। गर्भधारण से लेकर संतान को जन्म देने तथा उस शिशु के सूझबूझ आने तक का लालन पालन मादा ही करती है। याज्ञवलक्य मुनि का कथन है – "'जिस तरह चने अथवा सीप का आधा दल एक–दूसरे से मिलकर पूर्ण होता है। उसी प्रकार पुरुष का खाली आकाश नारी के साथ मिलने से पूर्ण होता है।' प्रकृति की मनोरम पुत्री नारी के अपने सौंदर्य और व्यक्तित्व से युगों युगों से धर्म, साहित्य और इतिहास को प्रभावित किया है। अपने विविध रूपों में उसने पुरुष का पोषण किया है। उसे प्रेरणा दी है।" 2 टोमस मूर का मत है कि – "स्त्री रात का तारा और प्रभात का हीरा है, वह तो ओस का कण है जिससे काँटों का मूँह भी हीरों से भर जाता है।" 3 अपने आप में इतनी महत्त्वपूर्ण नारी का व्यक्तित्व सृष्टि के आरंभ से ही देश, काल एवं वातावरण के अनुसार, कभी दबता कभी उभरता दिखाई देता है। रस्तोगीने नारी के व्यक्तित्व का मूल्यांकन बड़े सुन्दर शब्दों में किया है। उनका कहना है – "नारी भगवान की ही अद्‌भुत कृति नहीं है, वरन् मानवों की भी अद्‌भुत सृष्टि है। मनुष्य निरंतर अपने अंतरतम् से नारी को सौंदर्य की विभूति से विभूषित करता है। कविगण स्वर्णिम कल्पना के धागों से उसके लिए जाल–सा बुनते रहते हैं। चित्राकार उसके स्वरूप को, उसके बाह्य सौंदर्य को अमरत्व प्रदान करते रहते हैं। मानव हृदय की वासना ने सदैव नारी यौवन को ऐश्वर्य प्रदान किया है। नारी अर्धनारी है और अर्ध स्वप्न।" 4 नारी स्वभाव से ही प्रेम की मूर्ति तथा करुणामयी है। किसी को आत्मसमर्पण करने में ही उसे प्रसन्नता मिलती है। विवाह प्रथा इस समर्पण की भावना का ही एक रूप है लेकिन पुरुष जाति ने नारी के इस समर्पण की भावना को उसकी दुर्बलता समझा और उनसे यह अनुमान लगाया कि वह निराश्रित होने के कारण ही ऐसा करती है इसलिए विवाह को आवश्यक समझ कर उसे एक बंधन में जकड़ दिया गया और उसकी रक्षा निमित्त कितनी ही सामाजिक प्रथाओं द्वारा उसे बाँध दिया गया। जो किसी किसी समय अर्धांगिनी थी वह नारी दासी बन गयी।

विद्वानों के विचारों में नारी :

विभिन्न विद्वानों ने अपने लेखन में नारी के संबंध में अपने विचार व्यक्त किये हैं। महात्मा गाँधी ने नारी को नर की अपेक्षा श्रेष्ठ बताते हुए कहा है – "स्त्री को अबला कहना उसका अपमान है। यदि शक्ति का अभिप्राय पाशविक शक्ति है तो स्त्री पुरुष से कहीं अधिक शक्तिमान है। .... यदि पति देवता है तो पत्नी भी देवी है। वह दासी नहीं बल्कि मित्रा तथा सचिव है .... पति पत्नी एक दूसरे के गुरु हैं।" 5 गाँधीजी के मतानुसार नर–नारी में एक के अभाव में दूसरे का महत्त्व निरर्थक है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। स्वामी विवेकानंद कहते हैं – "स्त्री पूजन से ही समाज की प्रगति होती है। जिस देश में अथवा समाज में स्त्री पूजन नहीं होता वह देश अथवा समाज कभी ऊँचा नहीं उठ सकता।" 6 डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कहा है – "जहाँ कहीं अपने आपको उत्सर्ग करने की, अपने आपको खपा देने की भावना प्रधान है, वही नारी है।" 7 महादेवी वर्मा ने कहा है – "पुरुष प्रतिशोधमय शोध है स्त्री क्षमा। पुरुष शुष्क कर्तव्य है। स्त्री सरस सहानुभूति पुरुष ब्रह्म है तो स्त्री हृदय की प्रेरणा है।" 8 युग प्रवर्तक साहित्यकार प्रेमचंदजी के मतानुसार – "पुरुष विकास के क्रम में नारी से पीछे है। जिस दिन वह भी पूर्ण विकास तक पहुँचेगा वह स्त्री हो जायेगा। वात्सल्य, स्नेह, कोमलता, दया इन्हीं आधारों पर सृष्टि थमी हुई है और ये स्त्रियों के गुण हैं।" 9 इस प्रकार मनिषियों, चिंतकों, साहित्यकारों के नारी से संबंधित विचारों को देखने से स्पष्ट होता है कि नारी दया, क्षमा, त्याग, प्रेम आदि की सौन्दर्यपूर्ण प्रतिमा है। ऐसा एक भी पुरुष न होगा जिसका जीवन माता, पत्नी, भगिनी, पुत्री आदि के किसी न किसी रूप से प्रभावित न हुआ हो।

भारतीय समाज में नारी का स्थान :

भारतीय समाज में नारी का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है और समाज का आवश्यक अंग है। परिवार एवं परिवार का केन्द्रबिन्दु है नारी। मनुष्य के जीवन का महत्त्वपूर्ण पक्ष है नारी जीवन। इसके बिना मनुष्य का जीवन अपूर्ण ही है। अपनी विविध भूमिकाओं द्वारा नारी पुरुष का जीवन सुन्दर, सुखमय एवं सुसंपन्न बनाती है। इतना ही नहीं बल्कि – "नारी की पवित्राता, आधारनिष्ठा, युक्त दृढ़ता, व्यवहार प्रियता

International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
IJARST
ISSN: 2457-0362

तथा त्यागपूर्ण सेवा प्रियता ने हमारी संस्कृति को जन्म दिया है। इस पुण्यभूमि भारत की संस्कृति का केन्द्र नारी ही रही है।"10

विदेशियों को भारतीय संस्कृति की जिन विशेषताओं ने अपनी ओर आकृष्ट किया है उनमें नारी गौरव प्रमुख है। महामना एण्ड्रूज ने कहा है – "भारत वर्ष की महानता का सच्चा रहस्य तो हमें कद्मटुम्ब के अन्दर ही मिलता है। .... एक ओर पुरुष मातृशक्ति के रूप में स्त्री की पूजा करता है, दूसरी ओर स्त्री का आदर्श वह अनुपम पतिव्रत धर्म है जो दोनों भारतीय स्त्री पुरुषों को एक कोमलतम अदृष्ट स्नेह सूत्रा में बाँध देते हैं।"नारी के लिए विविध शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे – वह माता, पत्नी, पुत्री सभी रूपों में पुरुषों के लिए सम्मानीय है, अतः वह 'महिला' कहलाती है।"

"भारतीय नारी के सभी रूपों में एक सात्त्विकता थी, एक सौम्यता थी, एक दिव्यत्व था, जो समाज के शिरोभाग को विभूषित करता था और इस स्थान को प्राप्त करने के लिए उसे कोइ संघर्ष नहीं करना पड़ता था। अपने प्राकृतिक गुणों की सहज अभिव्यक्ति में स्वभाव से ही उसे वह पुण्यवाद प्राप्त था।" 13 भारतियों की दार्शनिक परम्परा भी नारी को प्रकृति रूपा मानती है। वे पुरुष और प्रकृति के संयोग से सृष्टि की उत्पत्ति मानते हैं। वह पुरुष की जन्मदात्री ही नहीं है बल्कि प्रेरणादात्री भी है। उसे पाकर पुरुष महान बन सकता है। इसलिए शायद – "भारतवासियों के सब आदर्श स्त्री रूप में पाये जाते हैं। विद्या का आदर्श सरस्वती में, धन का लक्ष्मी में, पराक्रम का महामाया या दुर्गा में। यहाँ तक कि भारतवासियों ने परम शक्तिशाली भगवान को भी जग–जननी के रूप में देखा है।" 14 "देवताओं के नाम भी नारी की महत्ता का निर्देश करते हैं। जैसे – सीता–राम, लक्ष्मी–विष्णु, राधा–कृष्ण।"

नारी वैदिक काल से लेकर आज तक :

भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति विभिन्न कालों में और विभिन्न समाजों में भिन्न–भिन्न प्रकार की रही है। विभिन्न कालों में सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन हुए और नारी के गौरव का उत्थान पतन हुआ। "वैदिक काल में स्त्रियों कि स्थिति पुरुषों के समकक्ष थी और उन्हें पुरुषों के समान अधिकार भी प्राप्त थे। इसी कारण हिन्दु समाज में उसे अर्धांगिनी कहा गया है। उस समय लड़कियों के भी उपनयन संस्कार होते थे और वे भी ब्रह्मचर्याश्रम में लड़कों के समान ही शिक्षा प्राप्त करती थी। प्रसिद्ध समाजशास्त्री डॉ. पी. एन. प्रभु ने इस सन्दर्भ में बताया है कि जहाँ तक शिक्षा का सम्बन्ध है, इस काल में स्त्री पुरुषों को समान अधिकार प्राप्त थे।" "लड़कियों का विवाह युवावस्था में होता था और बाल–विवाह का प्रचलन नहीं था। लड़कियों को अपना जीवनसाथी चुनने की स्वतंत्राता भी थी, विधवा अपनी इच्छानुसार पुनर्विवाह कर सकती थी। निःसंतान स्त्रियों को 'नियोग' द्वारा संतान प्राप्त करने की स्वतंत्राता थी। पत्नी के रूप में स्त्री की स्थिति काफी सुदृढ़ थी। अथर्ववेद के एक सुक्त में कहा गया है – "हे नववधू ! तू जिस घर में जा रही है, वहाँ की साम्राज्ञी है। तेरे सास, ससुर, देवर तथा अन्य व्यक्ति तुझे साम्राज्ञी मानते हुए तेरे शासन में आनंदित हो।" 17 "धार्मिक कार्यो में भी स्त्री–पुरुष के अधिकार समान थे और धार्मिक अनुष्ठानों को सम्पन्न करने में पत्नी का होना गृहस्थ के लिए परम आवश्यक था। रामायण में भी अश्वमेघ यज्ञ के समय सीता की अनुपस्थिति में उसकी मूर्ति को रखा जाने का उल्लेख मिलता है। इस युग में विदुषी स्त्रियाँ भी मिलती है।"18 अतः कहा जा सकता है कि वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति धार्मिक, सामाजिक दृष्टि से काफी सुदृढ़ थी। "ईसा के पश्चात् तीसरी सदी से लेकर 11वीं सदी के पूर्वार्ध तक के समय को भारतीय इतिहास में 'धर्मशास्त्रा काल' के नाम से जाना जाता है।"19 इस काल में स्त्रियों की स्थिति कद्मछ इस प्रकार की रही है। इस युग में "वैदिक नियमों की उपेक्षा होने लगती है और सामाजिक–धार्मिक संकीर्णताएँ इस युग में प्रवेश पाती हैं। स्त्रियों की स्थिति निम्न से निम्नतर होती जाती है। वे अब नितान्त परतंत्रा एवम् निःसहाय समझी जाती हैं। मनुस्मृति के समय से यह स्थापित हो गया कि पति की मृत्यु के बाद उसकी संपत्ति में विधवा का कोई अधिकार नहीं होगा।" "पहले पुरुषों की भाँति स्त्रियों के भी कोई संस्कार होते थे। अब उनके लिए मात्रा संस्कार रह गया। वैदिक काल में प्रेम–विवाह का प्रचलन था। विवाह पूर्व प्रेमी के लिए 'जार शब्द प्रयुक्त होता था, उसका अर्थ प्रेमी होता था। ऋग्वेद में कहीं भी 'जार' शब्द का अनैतिक अर्थ नहीं मिलता।"

International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
IJARST
ISSN: 2457-0362

"धर्मस्थ काल में जीवनसाथी के चुनाव में लड़की की इच्छा–अनिच्छा का कोई प्रश्न नहीं रहा। विवाह की आयु भी बारह से दस वर्ष की हो गयी। कच्मलीनता की गलत धारणा के कारण बहुपत्नी विवाह (च्वसलहलउल) का प्रचलन बढ़ा। विधुर लोग भी आठ या दस वर्ष की कन्या से शादी करने लगे। संपन्न तबके में रखैल का फैशन चल निकला। दूसरी तरफ ईसा के एक हजार वर्ष बाद अभिजातीय परिवारों में विधवाओं के पुनर्विवाह सदंतर बन्द हो गये।"

इस प्रकार धर्मशास्त्रा के काल में स्त्रियों की स्थिति निरंतर गिरती गई है। "आधुनिक युग में नारी की प्राचीन समस्याएँ काफी मात्राा में सुलझ चुकी हैं। पुरुषप्रधान तथा पूँजीवादी समाज में जबकि नारी प्राचीन परम्पराओं तथा रूढ़ियों को पालने के लिए बाध्य थी, आर्थिक पराधीनता उसके लिए बाध्य थी, आर्थिक पराधीनता उसके लिए एक अभिशाप था जिसे वह निरंतर सहती आई थी, नैतिकता तथा सामाजिक मर्यादा का दायित्व भी पुरुष समाज ने केवल नारी के कंधों पर ही रखा हुआ था याने कि किसी भी प्रकार की मर्यादा का पालन करना पुरुष के लिए अनिवार्य नहीं था परन्तु अब शिक्षा के सहारे नारी ने बहुत समस्याओं का रूप बदल दाला है।"23 आधुनिक नारी राजनीतिक, सामाजिक तथा साहित्यिक क्षेत्राों में भी रुचि ले रही हैं –"सरोजिनी नायडू, श्रीमती अरुणा असफअली, श्रीमती विजयालक्ष्मी पंडित और प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी जो आज के युग की महान देन हैं।"

साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में नारी समस्याओं को प्रधानता दी। साहित्यकारों ने एक ओर नारी जीवन की विभिन्न समस्याएँ दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, बाल विवाह, विधवा विवाह आदि का निरूपण किया है तो दूसरी ओर ममत्व, शील, सदाचार का चित्राण किया है। इस प्रकार भारत में नारी उत्थान और जागरण की भावना बींसवी सदी से आयी है – "नारी की मर्यादा का भाव आधुनिक काल से मुखर हुआ।"

आधुनिक युग में शिक्षा के बल पर तथा अपने अधिकारों की जागृति और सामाजिक सुधारकों, साहित्यकारों के कारण नारी अपने स्वतंत्रा व्यक्तित्व विकास का महत्त्व जान चुकी है। अब वह पुरुष से कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ रही है। वह अपने जीवन के अर्थ को समझने लगी है। वह पुरुष समाज से प्रश्न भी पूछ लेती है। अगर पुरुष पराई नारी के साथ अवैध संबंध रखकर भी अपनी गृहस्थी बसाये रखने की कामना रखता है उसे समाज तथा परिवार से बहिस्कृत क्यों नहीं किया जाता ? परन्तु ऐसा व्यवहार अगर नारी कर बैठे तो समाज तथा परिवार का उसके साथ दुर्व्यवहार क्यों ? आधुनिक नारी ऐसे शक्की दिमाग तथा प्रायः रोक–टोक करनेवाले जीवनसाथी को स्वीकार नहीं करती। वह भी अपने सुखी जीवन बनानेवाले अधिकार को समझने लगी हैं। इस प्रकार की कई विसंगतियाँ जब उसके वैवाहिक जीवन में आ जाती हैं तो वह सती–सावित्राी बनकर, घुल–घुलकर अपनी जान नहीं दे देती अपितु इस विसंगतियों से मुक्ति पाने के लिए उपाय ढूँढती है। तलाक भी दे सकती है, पुनर्विवाह भी कर सकती है। इस प्रकार आधुनिक काल में नारी की स्थिति में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ। उसकी ऐतिहासिक स्थिति सुदृढ़ हो गयी। मातृसत्ताक युग में जहाँ वह बलवती, स्वामिनी एवं संपत्ति की अधिकारिणी थी, वैदिक युग में जहाँ पुरुष के अधिकारों के काफी निकट पहुँच गई थी, वही आधुनिक काल में सैद्धांतिक रूप में उसका स्थान किसी भी प्रकार कम नहीं है। आज वह अंधकार काल को छिन्न–भिन्न कर समानता के वातावरण में साँस ले रही हैं।

हिन्दी साहित्य में नारी जीवन :

साहित्य और मनुष्य जीवन एक दूसरे से संबंधित हैं। नारी जीवन मनुष्य के जीवन का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। पुरुष और स्त्राी दोनों एक सिक्के की बाजुओं की तरह हैं। दोनों में से एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती अर्थात् मनुष्य जीवन स्त्राी–पुरुष दोनों से बना है लेकिन समाज का उनकी ओर देखने का दृष्टिकोण अलग–अलग है। नारी को निर्बल बनाने में समाज का पूरा हाथ रहा है। नारी की इस स्थिति का वर्णन साहित्यकारों ने अपने साहित्य में किया है – "मनुष्य के जीवन का महत्त्वपूर्ण पक्ष है नारी जीवन। इसके बिना मनुष्य का जीवन अपूर्ण ही है। मनुष्य जीवन को चित्रित करनेवाला साहित्य भी इसकी अपेक्षा नहीं कर सकता। अतः आदि साहित्य से लेकर आधुनिक काल तक साहित्य में नारी जीवन का चित्राण किया गया है। सृष्टि के प्रारंभ से ही नारी और पुरुष के दृढ़ परस्पर सम्बन्ध की अटूट श्रृंखला चली आ रही है।"26 डॉ. वल्लभदास तिवारी के मतानुसार

International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
IJARST
ISSN: 2457-0362

– "नारी ने ही हमारी वैदिक सभ्यता, संस्कृति तथा साहित्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। नारी ही आदिम संस्कृति का उद्‌गम स्थल है और नारी ही सृष्टि की उत्पादिका, प्रतिपालिका और गार्हस्थ स्नेहसुख की सरिता है।" 27 साहित्य में नारी का चित्राण विविध प्रकार से हुआ है। डॉ. श्यामबाला गोयल ने लिखा हैं – "हिन्दी साहित्य के इतिहास के आधार पर भी वीरगाथा काल में नारी के श्रृंगारिक रूप की प्रधानता थी। अतः उसके लिए युद्ध किये गये और युद्ध जीतने पर उसे उठाकर लाने की वस्तु समझकर उसके रूप सौंदर्य का भोग किया गया। भक्तिकाल में सन्त कवियों का निवृत्तिपरक दृष्टिकोण होने के कारण नारी को समस्त दुःखों की खान, काम की मूल बताकर उसे त्याज्य बताया गया। रीतियुग में कवि नारी के बाह्य सौन्दर्य पर इतने आकर्षित हुए कि उसके प्रत्येक अंग को कामुकता की दृष्टि से देखा गया और भोग–विलास की वस्तु मात्रा मान लिया गया। अतः मध्ययुगीन नारी अपने किसी भी रूप में अपने उच्च आसन पर नहीं थी।"

निष्कर्ष

शिवानी जी ने अपने कथा–साहित्य में नारी को केन्द्र बिन्दु में रखा है। शिवानी जी की एक–एक कहानी चाहे कृष्णकली, कालिन्दी, 'पूतों वाली' कोई भी हो, नारी संवेदना की मार्मिकता अन्तर्वेदना को जिस आत्मीयता एवं गहराई के साथ महसूस किया है वह अतुलनीय है। नारी संवेदना को रोचकता से गूँथने की कला–मर्मज्ञ थी–शिवानी। नारी भावों–अनुभवों के कैनवास पर नारी मन के विविध पन्नों की अन्तरंग अनुभूतियों की अद्‌भुत छटा अपनी लेखनी के जरिए बिखेरती है। शिवानी नारी की विभिन्न भूमिका को स्वीकार करती हुई भी उसकी एक स्वतन्त्रचेता अस्तित्व की हिमायती दिखाई देती है। उनका मानना है–''नारी को मैं रवीन्द्रनाथ के शब्दों में न केवल देवी रूप में पूजी जाना चाहती हूँ, न पूर्ण समर्पिता। उसका अपना आत्म–सम्मान अक्षुण्ण बना रहें नारी का सौष्ठव आहत न हो।'' अपने हर चरित्र में काया प्रवेश करती शिवानी उस जिन्दगी को जैसे उसी चरित्र के साथ जी लेती है। उनकी कल्पना के धागे में मोतियों से पिरोये शब्द पाठक के हृदय पटल पर गहराई से अपनी छाप छोड़ते हैं। नारी जीवन की त्रासदियों के बीच समाज निर्धारित मानदण्ड़ों की कड़ियाँ उसके चरित्र से जोड़ती शिवानी पुरुष के साथ उसके संबंधों में एक प्राकृतिक व नैसर्गिक जरूरत को हमेशा महत्त्व देती हैं जिसका समावेश प्रेम के चरम बिन्दु के रूप में होता है। स्त्री–पुरुष के संबंधों में प्रेम के महत्त्व को वे कभी स्वार्थ से नहीं जोड़ती। उनकी नायिकाएँ प्रेम का उच्च आदर्श उपस्थित करती है। शिवानी स्मृति विशेषांक में डॉ. अमीता श्रीवास्तव लिखती हैं–''शिवानी हिन्दी की उन बड़ी कथाकारों में से हैं जिन्होंने अपने पात्रों को बड़ी ममता और संवेदना से रचा है और उन्हें करूणा का ऐसा अक्षय कोष सौंप दिया है कि वे हमें बार–बार मानवीय करूणा और विडम्बना की डबडबाई आँख के आगे ला खड़ा करते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

कृष्णकली – शिवानी – पृ. 1

शिवानी के उपन्यासों में समाज – डॉ. सिद्राम खोट – पृ. 19

वही – पृ. 19

जालक – शिवानी – पृ. 101

वही – पृ. 100

शिवानी के उपन्यासों में समाज – डॉ. सिद्राम खोट – पृ. 22

वही – पृ. 20

आमोदर शान्तिनिकेतन – शिवानी – भूमिका पृ. 9

शिवानी के उपन्यासों के पात्रा – डॉ. सुष्मा पुरवार – पृ. 34

शिवानी के उपन्यासों में समाज – डॉ. सिद्राम खोट – पृ. 23

रतिविलाप – शिवानी – मुख पृष्ठ

शिवानी के उपन्यासों में समाज – डॉ. सिद्राम खोट – पृ. 24

महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ – डॉ. शीलप्रभा वर्मा

शिवानी के उपन्यासों में समाज – डॉ. सिद्राम खोट – पृ. 27

International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
www.ijarst.in
ISSN: 2457-0362

काव्यशास्त्रा – डॉ. भगीरथ मिश्र – पृ. 90

शिवानी के उपन्यासों में समाज – डॉ. सिद्राम खोट – पृ. 27

शिवानी के उपन्यासों में समाज – डॉ. सिद्राम खोट – पृ. 28

शिवानी के उपन्यास के पात्रा – डॉ. सुष्मा पुरवार – पृ. 39